IJAER/Aug-Sept 2012/Volume-1/Issue-2/Article No-28/ 210-213 ISSN: 2278-9677

International Journal of Arts & Education Research

मानसिंह 'द्विजदेव' का व्यक्तित्व और कृतित्व

Dr.Mangala
Assistant Professor
Global Institute of Education
Narayanpur, Rampur

(क) व्यक्तित्व

श्रीमन्महाराज मानसिंह 'द्विजदेव' का जन्म शाकद्वीपीय ब्राह्मणवंश में अयोध्या के राजा दर्शन सिंह के यहाँ मार्गशीर्ष शुक्ल पू. 1877 वि. तदनुसार ता. 10 दिसम्बर सन् 1820 ई. को हुआ था। 'द्विजदेव' इनका कविता का नाम है। उपनाम से ही प्रख्यात होने का गौरव 'भूषण' तथा 'सेनापति' की भाँति इनको भी प्राप्त है। इनके माता–पिता ने इनका नाम हनुमान सिंह रखा था। परन्तु राज्याधिकार प्राप्त करने के बाद इन्होंने अपना नाम मानसिंह रखा। काव्य में 'द्विजदेव' नाम इसलिये रखा कि मानसिंह नाम से प्रायः क्षत्रिय जाति उद्‌बोधित होती थी, अतः 'द्विजदेव' उपनाम रखा जिससे ब्राह्मण जाति के साथ ही इनका 'महाराज' होना भी उद्‌बोधित हो जाये। 'द्विजदेव' नीतिवान्, गुणवान्, सहृदय, उदार, वीर, पराक्रमी अथच बहुदर्शी व्यक्तित्व के साथ एक विशाल कवि–समाज के संरक्षक भी थे। लछिराम भट्ट, प्रवीन बल्देव तथा जगन्नाथ अवस्थी आदि कवियों का इनके दरबार में बड़ा सम्मान था, क्योंकि 'द्विजदेव' को कवि कर्म की यथार्थ परख थी। वे स्वयं भी बड़ी सुन्दर, कविता करते थे।

'लछिराम' कवि ने इनका तथा इनके वंश का संक्षिप्त परिचय देते हुए कहा है–

'मानसिंह महाराज ने, कीन्हों जेहि कविराज।
सुवन सुदरसनसिंह को साहगंज द्विजराज।।'

इस छन्द में 'द्विजदेव' के पिता राजा दर्शनसिंह, उनके तत्कालीन निवास स्थान शाहगंज तथा द्विजवंशी राजा होने का उल्लेख है।

महाराज मानसिंह एक वीर सैनिक थे। कहा जाता है कि वे किले की प्राचीर पर खड़ाऊँ पहने निधड़क चलते थे। किसी निश्चित दूरी पर गोला गिराने का उन्हें अभ्यास था। उन्हे गणित और ज्योतिष में भी दक्षता प्राप्त थीं उन्होंने 'अस्रलाम' नामक मानयन्त्र की स्थापना की। उन्होंने लखनऊ में एक धर्मशाला तथा अयोध्या में राज–दरबार का निर्माण कराया था। इन्हाने अपने बाहुबल और बुद्धि से मुसलमान राजाओं तथा अंग्रेज शासकों दोनों को ही प्रसन्न रखा और ससम्मान एक बहुत बड़ा राज्य स्थापित किया। उन्होंने अपने शासनकाल में अनेक उपलब्धियाँ पायी। उनकी कुछ उपलब्धियाँ इस प्रकार है–

सम्वत् 1901 में राजा दर्शनसिंह के मरने पर इनके सारे राज्य में अशान्ति फैल गयी। इनके दोनों बड़े भाइयों रामधीन सिंह और राजा रघुवरदयाल सिंह तथा कुछ प्रतिष्ठित अधिकारियों ने अपना देश छोड़कर अंग्रेजी राज्य में चले जाने का निश्चय किया। उस समय मानसिंह की अवस्था कुल 18 वर्ष की थी। इस छोटी उम्र में भी उन्होंने साहस से काम लिया और कोष तथा सेना के अभाव में भी अपनी वीरता से अपने राज्य की बहुत कुछ व्यवस्था की।[1]

एक बार किसी कारण से राजा बख्तावरसिंह को बादशाह ने नजरबन्द कर रखा था। मानसिंह ने जुर्माने के तीन लाख रूपये जमाकर उन्हें कारामुक्त किया।[2] इसी समय बादशाह को यह समाचार मिला कि सूरजपुरा के विद्रोही राजा ने अपनी गढ़ी में 400 मनुष्यों को बन्द कर रखा है और उनको जीवित ही भस्म कर देना चाहता है। बादशाह अमजद अली ने महाराजा मानसिंह के वीरत्व की प्रशंसा सुन रखी थी, इसलिये उन्हीं को इस कार्य पर भजने के लिये बादशाह ने राजा बख्तावरसिंह को आज्ञा दी। राजा बख्तावरसिंह बड़ी चिन्ता में पड़ गये, क्योंकि मानसिंह की उस समय उम्र कम थी। परन्तु बादशाह की आज्ञा टाली भी न जा सकती थी। अन्त में इनके कौशल तथा साहस पर विश्वास कर उन्होंने आज्ञा दे दी। आज्ञा पाकर महाराजा मानसिंह ने गुप्तचर भेजकर सूरजपुरा के राजा की गढ़ी में हथियारबन्द सिपाहियों

का पूरा पता लगा लिया और यह भी ज्ञात कर लिया कि किस दिन कैदी जलाये जायेंगे। बीच में केवल एक ही दिन बाकी था, इससे ससैन्य जाने में गढ़ी तो घिर जाती पर कैदियों की रक्षा नहीं हो पाती। अतः जहाँ पर तीन सौ वीर नहीं थे, उसी ओर से सीढ़ियाँ लगाकर गढ़ी के भीतर चले गये और बंदियों एवं तोपों पर अपना अधिकार कर लिया। गढ़ी वाले चौंके तो चारों ओर से गोलियाँ चलाने लगे। महाराजा मानसिंह ने उन्हीं की तोपें उन पर ही दाग दीं। दो घन्टे में गढ़ी टूट गयी एवं अत्याचारी जीता पकड़ लिया गया। गढ़ी के अन्दर एक जगह लकड़ी का ढेर लगा हुआ था। उस दिन जय की दुन्दुभी न बजतीं तो सारे बन्दी भस्म कर दिये जाते। बन्दी छोड़ दिये गये। उस राजा की एक गढ़ी और थी, जिसमें दो हजार सिपाही थे और बहुत–सी गाला–बारूद और खाने–पीने की सामग्री, रखी हुई थी। वहाँ ईश्वर की लीला यह हुई कि गढ़ी के रक्षक डर के मारे गढ़ी छोड़कर भाग गये और बिना युद्ध किये उस पर इनका अधिकार हो गया। बादशाह ने मानसिंह की वीरता से प्रसन्न होकर उनको 'राजा बहादुर' की उपाधि दी और दरियाबाद रूदौली का नाजिम नियुक्त कर दिया। इसके साथ ही इनका नाम बदलकर 'राजा मानसिंह बहादुर' रखा गया।[4] एक और वीरता का काम जो उन्होंने बादशाह की आज्ञा से किया था, वह सीहीपुर के राजा का दमन था।

सन् 1847 में सीहीपुर के गर्गवंशी राजा हरिपाल सिंह ने विद्रोह का झण्डा ऊँचा किया। राजा मानसिंह ने इस विद्रोही का सिर काट लिया। इस पर बादशाह ने खुश होकर इनको एक फरमान प्रदान किया जिसमें यह शेर भी था–

'ईकार अज तो दो मंहो चुनी कुनंद।
बंदस्त बबाजुए तो अजार आफरी बुनंद।।'

अर्थात् तुम तो ऐसे बहादुरी से काम करते हो और दूसरे बहादुर भी ऐसे ही काम करते हैं, लेकिन वे तुम्हारे कामों को देखकर तुम्हारी सहसां प्रशंसा करते है। इसके साथ ही इनको 'कायमजंग' की उपाधि भी दी गयी।

महाराजा मानसिंह 'द्विजदेव' ने अपने करीब 50 वर्ष के जीवनकाल में देश की केन्द्रीया सत्ता की अनुकूलता और प्रतिकूलता दोनों देखीं और उतार–चढ़ाव से भरे तत्कालीन सामंती और सामाजिक जीवन के मध्य एक यशस्वी और उपलब्धियों से भरा जीवन जिया तथा मात्र 50 वर्ष की आयु में लम्बी बीमारी से उनकी मृत्यु हो गयी। राय बहादुर लाला सीताराम ने 'अयोध्या का इतिहास' में 'द्विजदेव' के स्वर्गवासी होने की तिथि कार्तिक बदी द्वितीया सम्वत् 1828 विक्रम (11 अक्टूबर, 1870) बताई है[6] तथा 'शृंगारलतिकासौरभ' में इनके स्वर्गवास की तिथि के बारे में लिखा है– 'इनका स्वर्गवास कार्तिक कृष्ण द्वितीया सम्वत् 1926 वि. तदनुसार 10 अक्टूबर, 1870 में 50 वर्ष की अवस्था में हुआ था।[7]

'द्विजदेव' के निधन पर लछिराम कवि ने शोक व्यक्त करते हुए निम्नलिखित कवित्त की रचना की।[8]

'कलित कुसासन पै आसनी कमल करि,
कामधेनु विविध बिवुध कर दै बयो।।
वेद रीति भदेन सों सुरपुर कीनौं गौन,
सुमन विमान पै सुरेश आनि लै गयौ।।
कवि लछिराम राम जानकी सनेह रचि,
औध सरजु के तीर भारी जस कै गयो।।
महाराज राजन को सूबे सिर ताजन की,
मानो मानसिंह एक सूरज अर्थे गयो।।'

महाराज द्विजदेव ने अपनी मृत्यु से पूर्व एक वसीयतनामा लिखकर संदूक के अंदर रख दिया था, जिसके अनुसार उनकी मृत्यु के बाद राज्याधिकार उनकी रानी सुभावकुँवरि को हुआ।

(ख) कृतित्व

इस प्रकार खोज व साक्ष्य–संग्रहों के द्वारा 'द्विजदेव' की कुल पाँच रचनाओं का पता चलता है। रचनाकाल व क्रमानुसार इनके नाम इस प्रकार हैं–

1. शृंगारबत्तीसी
2. शृंगारचालीसी
3. शृंगारलतिका

4. अविमुक्तपंचदशी
5. मानमयंक।

'द्विजदेव' कृत इन रचनाओं का विस्तृत परिचय इस प्रकार है–

1. शृंगारबत्तीसी :

शृंगारबत्तीसी लाला त्रिकोलीनाथ सिंह के सम्पादकत्व में लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से अक्टूबर 1885 में प्रकाशित हुई थी। कालक्रमानुसार यह द्विजदेव की प्रथम रचना है। कदाचित् महाराज द्विजदेव के कवित्व का हिन्दी जगत् को परिचय कराने वाली यह पहली कृति रही होगी। इसका तीसरा संस्करण इस समय उपलब्ध है।

जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट होता है कि यह छन्दों की गणना पर आधारित काव्य परिपाटी का प्रतिनिधित्व करने वाली कृति है, जिसके नाम से लगता है कि यह बत्तीस छन्दों वाली कृति है, किन्तु वास्तव में इस रचना में कुछ सैंतीस छन्दों का संकलन है। यह एक शृंगारपरक रचना है। 'शृंगारबत्तीसी' के विषय में 'हिन्दी साहित्य के समीक्षात्मक इतिहास' में लिखा है कि– 'यह महाराज मानसिंह द्विजदेव के बत्तीस शृंगार कवित्तों का संग्रह है, प्रत्यक कविता सौन्दर्य व शृंगार की छटा परिपूर्ण है।

2. शृंगारचालीसी :

इस रचना का प्रकाशन वि. सम्वत् 1944 में हुआ। मुखपृष्ठ पर छपे विवरण से स्पष्ट है कि इसे अयोध्यानरेश श्री प्रतापनारायण सिंह की आज्ञा से काशी निवासी श्री पन्नालाल शर्मा ने शोधन करके 'अमर यन्त्रालय' से मुद्रित कराया। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है कि यह निश्चित छन्द–संख्या पर आधारित नामाभिधान वाले काव्यों की रचना परिपाटी पर तैयार किया गया काव्य है। 'शृंगारबत्तीसी' के सभी छन्द इसमें उपलब्ध हैं। सोलह पृष्ठों की इस रचना में छप्पय, सवैया, कवित्त आदि छन्दो का प्रयोग है। 'शृंगारचालीसी' की प्राप्त प्रति 5+9 के पन्नों पर है। इस प्रति में सर्वत्र शृंगार को शृड.गार की तरह लिखा गया है। पुस्तक ब्रजभाषा में है तथा राधा–माधव की मधुर–लीलाएँ ही छन्दों में कही गई हैं। इसका मात्र एक ही संस्करण निकला था, जो तीथों मद्रण शैली में पाण्डुलिपि के अक्षरों के मूल स्वरूप में छपा है।

3. शृंगारलतिका :

महाराज मानसिंह की सर्वाधिक लोकप्रिया रचना 'शृंगारलतिका' महाराजा त्रिलोकीनाथ सिंह 'भुवनेश' की आज्ञा से, मुंशी नवलकिशोर के मुद्रणालय से प्रथम बार अक्टूबर 1883 में प्रकाशित हुई थी। कालान्तर में यह पुस्तक पं. पन्नालाल शर्मा 'द्विज' के द्वारा सम्पादित होकर अमर यन्त्रालय काशी और पण्डित नकछेदी तिवारी उपनाम 'अजान कवि' द्वारा सम्पादित 'चन्द्रप्रभा प्रेस' काशी से मुद्रित हुई। इसकी हस्तलिखित विज्ञप्ति के अनुसार इसमें श्रीकृष्ण महाराज की परमप्यारी राधिका का शृंगारवर्णन है।

4. अविमुक्तपंचदशी :

'अविमुक्तपंचदशी' द्विजदेव की एकमात्र संस्कृत रचना है। इस रचना में कुल 15 श्लोक है। 'शृंगारबत्तीसी' के सम्पादक 'द्विजदेव' के वंशज लाल त्रिलोकीनाथ सिंह की आज्ञा से मुद्रित प्रस्तुत पुस्तक की मुद्र की भूमिका में शृंगारलतिका, शृंगारबत्तीसी के साथ–साथ 'अविमुक्तपंचदशी' के विषय में कुछ इस प्रकार लिखा है– 'शरत्काल में काशीपुरी जाय मणिकर्णिका नहाय 'अविमुक्तपंचदशी' बनाया वाराणासी की स्तुति कीनी। फिरि परमेश्वर की कृपा ते राज्य प्राप्त भयो और यह दोनों ग्रन्थ आज लौ अस्तव्यस्त परे रहे। उनको परम कारूणिक दीनदयाल उक्त महाराज के स्थानस्थ महाराज त्रिलोकीनाथ सिंह ने सुधारि छापने की आज्ञा दीनी।'

5. मानमयंक :

कविवर द्विजदेव के सरस एवं चित्ताकर्षक छन्दों का एक सुलभ और सस्ता संस्करण 'मान–मयंक' नाम से श्री हरदयालु सिंह ने गंगा ग्रन्थागार, लखनऊ से सम्वत् 1997 में प्रकाशित कराया है। इसमें कवि की पीयूषस्यदिनी दो सौ सैंतालीस कविताओं का संकलन है। यह प्रकाशन साधारण स्थिति के साहित्यानुरागियों को ध्यान में रखकर ही किया गया है। मुक्तक छन्दों का यह संग्रह काफी बड़ा है और इसके नाम 'मानमयंक' का प्रथम अक्षर 'मान' इसके प्रणेता मानसिंह का ही नामांश है।

निष्कर्ष :

मानसिंह 'द्विजदेव' जितने वीर, पराक्रमी, गौरवशाली, महान राजा थे, उतने ही प्रभावशाली कवि भी थे। महाराजा द्विजदेव का व्यक्तित्व अपने आप में अद्‌भुत है। युद्धविद्या की कठोरता और काव्यविद्या की कोमलता का सामंजस्य पूर्ण संघटन इनके व्यक्तित्व की विशेषता है। ऐसा व्यक्तित्व सम्पूर्ण हिन्दी संसार में विरल है। द्विजदेव अपने आसपास एक अतिप्रिय साहित्यिक वातावरण बनाये रखते थे। मिश्रबन्धुओं ने इन्हें कवियों का कल्पवृक्ष कहा है।

सन्दर्भ सूची :

1. अयोध्या का इतिहास : पृष्ठ 175
2. फैजाबाद गजेटियर : पृष्ठ 162
3. अयोध्या का इतिहास : पृष्ठ 174
4. तारीखे अयोध्या : पृष्ठ 106
5. अयोध्या का इतिहास : पृष्ठ 174
6. लाला सीताराम : अयोध्या का इतिहास, पृष्ठ 169
7. श्रृंगारलतिका सौरभ : पं० जवाहरलाल चतुर्वेदी लिखित भूमिका से
8. पं० नकछेदी तिवारी : कविराज लछिराम कवि का जीवन चरित्र जीवनी भाग पृष्ठ – 3
9. पं० लछिराम भट्ट प्रताप रत्नाकर पृष्ठ 178
10. डॉ० कृष्णलाल हंस : हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पृष्ठ 322
11. मिश्रबन्धु : मिश्रबन्धु विनोद पृष्ठ 1020